सूत्रकृतांग का वर्ण्य विषय एवं वैशिष्ट्य

डॉ. अशोक कुमार जैन

सूत्रकृतांग दो श्रुतस्कन्धों एवं २३ अध्ययनों में विभक्त है। इसमें विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं के साथ साधक की साधना को उच्चता प्रदान करने वाले सूत्र एवं प्रेरकतत्त्व उपलब्ध हैं। आचारांग के अनन्तर सूत्रकृतांग को जैनागमों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आगम माना जाता है। जैन विश्वभारती, लाडनूँ के प्राध्यापक डॉ. अशोक जी ने अपने आलेख में सूत्रकृतांग की विषयवस्तु का संक्षेप में प्रतिपादन किया है।—**सम्पादक**

नाम बोध

अंग-साहित्य में सूत्रकृतांग दूसरा अंग है। समवाय, नंदी और अनुयोगद्वार में इस आगम का नाम 'सूयगडो' है। निर्युक्तिकार भद्रबाहु स्वामी ने इस आगम के तीन गुणनिष्पन्न नाम बताए हैं— १. सूतगड २. सुत्तकड ३. सूयगड—सूचाकृत। यह मौलिक दृष्टि से भगवान महावीर से सूत (उत्पन्न) है तथा यह ग्रन्थ रूप में गणधर के द्वारा कृत है, इसलिए इसका नाम सूत्रकृत (सूतगड) है। इसमें सूत्र के अनुसार तत्त्व बोध किया जाता है, इसलिए इसका नाम सुत्तकड है। इसमें स्व और पर समय की सूचना है इसलिए इसका नाम सूचनाकृत (सुयगड) है। वस्तुतः सूत, सुत्त और सूय ये तीनों सूत्र के ही प्राकृत रूप हैं। उसी के तीन गुणात्मक नामों की परिकल्पना की गयी। समवाय और नंदी में यह स्पष्टतया उल्लिखित है कि सूत्रकृतांग में स्वसिद्धान्त एवं परसिद्धान्त की सूचना है—

"सूयगडे णं ससमया सूइज्जंति,परसमया सूइज्जंति,ससमय परसमय सूइज्जंति"

जो सूचक होता है उसे सूत्र कहा जाता है। इस आगम की पृष्ठभूमि में सूचनात्मक तत्त्व की प्रधानता है, इसलिए इसका नाम सूत्रकृत है।

आचार्य वीरसेन के अनुसार सूत्रकृतांग में अन्य दार्शनिकों का वर्णन है। इस आगम की रचना इसी के आधार पर की गई, इसलिए इसका नाम सूत्रकृत रखा गया। सूत्रकृत शब्द के अन्य व्युत्पत्तिपरक अर्थों की अपेक्षा यह अर्थ अधिक संगत प्रतीत होता है। 'सुत्तगड' और बौद्धों के 'सुत्तनिपात' में नाम-साम्य प्रतीत होता है।

सूत्रकृतांग का स्वरूप

यह दो श्रुतस्कन्धों में विभक्त है। प्रथम श्रुतस्कन्ध में १६ अध्ययन हैं। जिनके नाम हैं— समए (समय), वेयालिए(वैतालीय), उवसग्ग परिण्णा (उपसर्ग परिज्ञा), इत्थी परिण्णा (स्त्री परिज्ञा), णरयविभत्ति (नरक विभक्ति), महावीरत्थुई (महावीर स्तुति), कुसीलपरिभासितं(कुशील परिभाषित), वीरियं (वीर्य), धम्मो(धर्म), समाही (समाधि), मग्गे(मार्ग), समोसरणं (समवसरण), आहत्तहीयं (याथातथ्य), गंथो (ग्रन्थ), जमईए(यमकीय), गाहा(गाथा)। पहला श्रुतस्कन्ध प्रायः पद्यों में है। उसमें केवल एक अध्ययन में गद्य का प्रयोग हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीय श्रुतस्कन्ध में सात अध्ययन हैं। जिनके नाम हैं— पौंडरीए (पौण्डरीक), किरिया ठाणे(क्रिया स्थान), आहार परिण्णा (आहार परिज्ञा), पच्चक्खान किरिया(प्रत्याख्यान क्रिया), आयार सूयं (आचार श्रुत), अद्दइज्जं (आर्द्रकीय), णालंदइज्जं(नालंदीय)। इस श्रुत स्कन्ध में गद्य और पद्य दोनों पाये जाते हैं।

इस आगम में गाथा छन्द के अतिरिक्त इन्द्रव्रजा, वैतालिक, अनुष्टुप् आदि अन्य छन्दों का भी प्रयोग मिलता है।

वैशिष्ट्य

पंचभूतवाद, ब्रह्मैकवाद–अद्वैतवाद या एकात्मवाद, देहात्मवाद, अज्ञानवाद, अक्रियावाद, नियतिवाद, आत्मकर्तृत्ववाद, सद्वाद, पंचस्कन्धवाद तथा धातुवाद आदि का सूत्रकृतांग के प्रथम स्कन्ध में प्ररूपण किया गया है। तत्पक्षस्थापन और निरसन का एक सांकेतिक क्रम है। द्वितीय श्रुतस्कन्ध में परमतों का खण्डन किया गया है— विशेषत: वहां जीव एवं शरीर के एकत्व, ईश्वरकर्तृत्व, नियतिवाद आदि की चर्चा है। प्राचीन दार्शनिक मतों, वादों और दृष्टिकोणों के अध्ययन के लिए सूत्रकृतांग का अत्यन्त महत्त्व है। आगे हम अध्ययन क्रमानुसार वर्ण्य विषय पर संक्षिप्त प्रकाश डाल रहे हैं।

वर्ण्य विषय

प्रथम श्रुतस्कन्ध

प्रथम अध्ययन का नाम जैसा ऊपर निर्देश किया गया है **समए (समय)** है। इस अध्ययन का विषय है— स्वसमय अर्थात् जैनमत और परसमय अर्थात् जैनेतर मतों के कतिपय सिद्धान्तों का प्रतिपादन। इस अध्ययन के चार उद्देशक और अठासी श्लोक हैं। इनमें विभिन्न मतों का प्रतिपादन, खण्डन और स्वमत का मण्डन है। यहाँ परिग्रह को बन्ध और हिंसा को वैरवृत्ति का कारण बताते हुए लिखा है—

"सव्वे अकंतदुक्खा य, अओ सव्वे अहिंसिया।।"1/84

कोई भी जीव दु:ख नहीं चाहता इसलिए सभी जीव अहिंस्य हैं, हिंसा करने योग्य नहीं हैं।

"एयं खु णाणिणो सारं, जं ण हिंसइ कंचणं।
अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया।।" 1/85

अर्थात् ज्ञानी होने का यही सार है कि वह किसी की हिंसा नहीं करता। समता अहिंसा है, इतना ही उसे जानना है।

परिग्रह बंधन है, हिंसा बंधन है। बन्धन का हेतु है ममत्व। कर्मबन्ध के मुख्य दो हेतु हैं— आरंभ और परिग्रह। राग, द्वेष, मोह आदि भी कर्मबन्ध के हेतु हैं, किन्तु वे भी आरम्भ परिग्रह के बिना नहीं होते। अत: मुख्यत: इन दो हेतुओं आरम्भ और परिग्रह का ही ग्रहण किया है। इन दोनों में भी परिग्रह

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुरुतर कारण है।

इसमें प्राचीन दार्शनिक मतों जैसे भूतवाद, आत्माद्वैतवाद, एकात्मवाद, अकारकवाद, क्रियावाद, नियतिवाद आदि का परिचय देकर इन सबका निरसन किया है।

द्वितीय अध्ययन **वैतालीय** है। इसमें आध्यात्मिक तथ्यों का प्रतिपादन है। प्रारम्भ में वर्णन किया गया है-

"संबुज्झह किण्ण बुज्झह, संबोही खलु पेच्च दुल्लहा।
णो हूवणमंति राइओ, णो सुलभं पुणरवि जीवियं।।" 2।1

(भगवान ऋषभ ने अपने पुत्रों से कहा) संबोधि को प्राप्त करो। बोधि को क्यों नहीं प्राप्त होते हो। जो वर्तमान में संबोधि को प्राप्त नहीं होता, उसे अगले जन्म में भी वह सुलभ नहीं होती। बीती हुई रातें लौटकर नहीं आती। जीवन सूत्र के टूट जाने पर उसे पुनः साधना सुलभ नहीं है।

पारिवारिक मोह से निवृत्ति के संबंध में लिखा है-

"दुक्खी मोहे पुणो पुणो, णिव्विंदेज्ज सिलोगपूयणं।
एवं सहिएऽहिपासए, आयतुले पाणेहि संजए।। 2/66

अर्थात् दुःखी मनुष्य पुनः पुनः मोह को प्राप्त होता है। तुम श्लाघा और पूजा से विरक्त रहो। इस प्रकार सहिष्णु और संयमी सब जीवों में आत्मतुला को देखें। अपने समान समझे।

परीषह-जय, कषाय-जय आदि का भी सम्यक् निरूपण इस अध्ययन में किया गया है। काम, मोह से निवृत्त होकर आत्मभाव में रमण करने का उपदेश इस अध्ययन में दिया गया है।

तृतीय अध्ययन **'उपसर्ग परिज्ञा'** है। उपसर्गों को समता पूर्वक सहने की क्षमता वाला मुनि अपने लक्ष्य को पा लेता है। उपसर्ग का अर्थ है- उपद्रव। स्वीकृत मार्ग पर अविचल रहने तथा निर्जरा के लिए कष्ट सहना परीषह है। अनुकूल उपसर्ग मानसिक विकृति पैदा करते हैं और प्रतिकूल उपसर्ग शरीर विकार के कारण बनते हैं। अनुकूल उपसर्ग सूक्ष्म होते हैं और प्रतिकूल उपसर्ग स्थूल होते हैं। धीर पुरुष बंधन से मुक्त होते हैं यथा-

"जेहिं काले परिक्कंतं ण पच्छा परितप्पए।
ते धीरा बंधणुम्मुक्का, णावकखंति जीवियं।।" 3/75

अर्थात् जिन्होंने ठीक समय पर पराक्रम किया है वे बाद में परिताप नहीं करते। वे धीर पुरुष (कामासक्ति) के बंध से मुक्त होकर (काम-भोगमय) जीवन की आकांक्षा नहीं करते।

अध्ययन के अंत में 'ग्लान सेवा' व उपसर्ग सहन करने पर बल दिया है।

चतुर्थ अध्ययन **'इत्थीपरिण्णा'** (स्त्री परिज्ञा) में स्त्री संबंधी परीषहों को सहन करने का उपदेश दिया गया है। मुनि को सभी संसर्ग का वर्जन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करते हुए लिखा—

"एवं खु तासु विण्णप्पं, संथवं संवासं च चएज्जा।
तज्जातिया इमे कामा, वज्जकरा य एवमक्खया।।" 4/50

इस प्रकार स्त्रियों के विषय में जो कहा गया है(उन दोषों को जानकर) उनके साथ परिचय और संवास का परित्याग करे। ये काम.भोग सेवन करने से बढ़ते हैं। तीर्थंकरों ने उन्हें कर्म-बन्धन कारक बतलाया है।

पंचम अध्ययन का नाम **'नरक विभक्ति'** है। नरक में जीव को किस प्रकार के भयंकर कष्ट भोगने पड़ते हैं उसका वर्णन इसमें किया गया है। वैदिक, जैन और बौद्ध तीनों ही परम्पराओं में नरकों का वर्णन है। योग सूत्र के व्यास--भाष्य में सात महानरकों का वर्णन है। बौद्ध ग्रन्थ 'कोकालिय' नामक सुत्त में नरकों का वर्णन है। यह वर्णन इस अध्याय से बहुत कुछ मिलता जुलता है।

षष्ठ अध्ययन का नाम **'महावीरत्थुई'** (महावीर स्तुति) है। इसमें श्रमण भगवान महावीर की विवधि उपमाएं देकर स्तुति की गयी है। यह महावीर की प्राचीनतम स्तुति है। महावीर को इसमें हाथियों में ऐरावत, मृगों में सिंह, नदियों में गंगा और पक्षियों में गरुड़ की उपमा देते हुए लोक में सर्वोत्तम बताया है। भगवान महावीर की प्रधानता के संदर्भ में लिखा है—

"दाणाण सेट्ठं अभयप्पयाणं, सच्चेसु य अणवज्जं वयंति।
तवेसु या उत्तम बंभचेरं, लोगुत्तमे समणे णायपुत्ते।।" 6/23

जैसे दानों में अभयदान, सत्य वचन में अनवद्य वचन, तपस्या में ब्रह्मचर्य प्रधान होता है, वैसे ही श्रमण ज्ञात पुत्र लोक में प्रधान हैं।

इस प्रकार भगवान महावीर के अनेक गुणों का वर्णन इस अध्ययन में है।

सप्तम अध्ययन **'कुसीलपरिभासित' (कुशील परिभाषित)** है। इसमें शील, अशील और कुशील का वर्णन है। कुशील का अर्थ अनुपयुक्त व अनुचित व्यवहार वाला है। जो साधक असंयमी है, जिनका आचार विशुद्ध नहीं है, उनका परिचय इस अध्ययन में किया गया है। यहां तीन प्रकार के कुशीलों की चर्चा की गई है। वे इस प्रकार हैं—

1. **अनाहार संपज्जण**— आहार में मधुरता पैदा करने वाले, नमक के त्याग से मोक्ष मानने वाले।
2. **सीओदग सेवण**— शीतल जल के सेवन से मोक्ष मानने वाले।
3. **हुएण**— होम से मोक्ष मानने वाले।

यहाँ स्पष्टतया बताया है कि तपस्या से पूजा पाने की अभिलाषा न करें। तप मुक्ति का हेतु है। पूजा सत्कार या इसी प्रकार की दूसरी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए इसका उपयोग न करें। जो पूजा सत्कार के निमित्त तपस्या करता है, वह तत्त्व का ज्ञाता नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्टम अध्ययन **'वीरियं' (वीर्य)** है। सूत्रकार ने अकर्मवीर्य-पण्डित वीर्य और कर्मवीर्य बलवीर्य ये दो प्रकार बताये हैं। अकर्मवीर्य में संयम की प्रधानता है। पण्डित वीर्य को मुक्ति का कारण बताया गया है। इन्द्रिय संयम पर बल देते हुए कहा है—

"अतिक्कमंति वायाए, मणसा वि ण पत्थए।
सव्वओ संवुडे दंते, आयाणं सुसमाहरे।।" 8/21

महाव्रतों का वाणी से अतिक्रम न करे। मन से भी उनके अतिक्रम की इच्छा न करे। वह सब ओर से संवृत और दान्त होकर इन्द्रियों का संयम करे।

नवम अध्ययन **'धम्म' (धर्म)** है। इसमें भगवान महावीर द्वारा बताये गये धर्म का निरूपण है। निर्युक्तिकार ने कुल धर्म, नगर धर्म, राष्ट्र धर्म, गण धर्म, संघ धर्म, पाखण्ड धर्म, श्रुत धर्म, चारित्र धर्म, गृहस्थ धर्म आदि अनेक रूपों में 'धर्म' शब्द का प्रयोग किया है। धर्म के मुख्य रूप से दो भेद हैं— लौकिक धर्म और लोकोत्तर धर्म। इस अध्ययन में लोकोत्तर धर्म का निरूपण है।

दशम अध्ययन **'समाही' (समाधि)** है। समाधि का अर्थ है— समाधान, तुष्टि अवरोध। इसमें भाव, श्रुत, दर्शन और आचार इन चार प्रकार की समाधियों का वर्णन किया गया है।

एकादश अध्ययन का नाम **'मग्गे' (मार्ग)** है। भगवान महावीर ने अपनी साधना-पद्धति को 'मार्ग' कहा है। समाधि के लिए साधक को ज्ञान, दर्शन, चारित्र तथा तपोमार्ग का आचरण करना चाहिए— यह उपदेश दिया गया है।

बारहवें अध्ययन का नाम **'समवसरण'** है। संमवसरण का अर्थ है—वाद-संगम। जहाँ अनेक दृष्टियों/दर्शनों का मिलन होता है, उसे समवसरण कहते हैं। इस अध्ययन में क्रियावाद, अक्रियावाद, अज्ञानवाद और विनयवाद इन चारों वादों की कतिपय मान्यताओं की समालोचना कर यथार्थ का निश्चय किया गया है।

त्रयोदश अध्ययन का नाम **'यथातथ्य'** है। इसमें यह प्रतिपादित किया गया है कि मद रहित साधना करने वाला साधक ही सच्चा विज्ञ और मोक्षगामी है।

चौदहवें अध्ययन का नाम **'ग्रन्थ'** है। ग्रन्थ का अर्थ है— आत्मा को बांधने वाला। ग्रन्थ दो प्रकार का है— द्रव्य और भाव ग्रन्थ। भाव ग्रन्थ के दो प्रकार हैं— १. प्रशस्त भाव ग्रन्थ जिसके अन्तर्गत ज्ञान, दर्शन और चारित्र है। २. अप्रशस्त भाव ग्रन्थ में प्राणातिपात आदि हैं।

पन्द्रहवें अध्ययन का नाम **'जमईए' (यमकीय)** है। इसकी सभी गाथाएँ 'यमक' अलंकार से युक्त हैं। इसमें संयम एवं मोक्षमार्ग की साधना का सुपरिणाम बताया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोलहवें अध्ययन का नाम **'गाथा'** है। निर्युक्तिकार ने गाथा का अर्थ किया है—जिसका मधुरता से गान किया जा सके, वह गाथा है। जिसमें अर्थ की बहुलता हो, वह गाथा है या छन्द द्वारा जिसकी योजना की गई हो, वह गाथा है। इसमें साधु के माहण, श्रमण, भिक्षु और निर्ग्रन्थ ये चार नाम देकर उनकी व्याख्या की गई है।

इस प्रकार प्रथम श्रुतस्कन्ध के अध्ययन में विषयों का वर्णन किया गया है।

द्वितीय श्रुतस्कन्ध

इसके प्रथम अध्ययन का नाम **'पुण्डरीक'** है। इसमें बताया गया है कि यह संसार पुष्करिणी है। इसमें कर्मरूप जल एवं काम भोग का कीचड़ भरा है। उसके मध्य में एक पुण्डरीक (कमल) है। उस कमल को अनासक्त, निःस्पृह और अहिंसादि महाव्रतों का पालन करने वाले साधक ही प्राप्त कर सकते हैं।

द्वितीय अध्ययन का नाम **'क्रिया स्थान'** है। यहां धर्म.क्रिया का वर्णन करके धर्म.क्रिया की प्रेरणा दी गई है।

तृतीय अध्ययन का नाम **'आहारपरिज्ञा'** है। इसमें आहार की विस्तृत चर्चा है। श्रमणों को संयम पूर्वक आहार ग्रहण करने की प्रेरणा दी गई है।

चतुर्थ अध्ययन का नाम **'प्रत्याख्यान परिज्ञा'** है। इसमें जीवन को मर्यादित बनाने के लिए प्रत्याख्यान रूप क्रिया की आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया है।

पांचवे अध्ययन के **'आचार श्रुत'** व **'अणगार श्रुत'** ये दो नाम उपलब्ध होते हैं। इसमें बताया गया है कि आचार के सम्यक् पालन के लिए बहुश्रुत होना आवश्यक है। साथ ही श्रमण को अमुक अमुक प्रकार की भाषा न बोलने का भी निर्देश है।

छठा अध्ययन **'आर्द्रकीय'** है। इसमें अनार्य देश में उत्पन्न राजकुमार आर्द्रक के जैन मुनि बनने का उल्लेख करने के पश्चात् उनके द्वारा गोशालक, हस्ती तापस आदि के मतों का निरसन किया गया है।

सातवें अध्ययन का नाम **'नालन्दीय'** है। इस अध्ययन में गणधर गौतम का पार्श्वापत्यिक पेढ़ाल पुत्र के साथ मधुर संवाद है। पेढ़ाल पुत्र चातुर्याम धर्म को छोड़कर पंचयाम धर्म स्वीकार कर लेते हैं।

इस प्रकार हम पाते हैं कि सूत्रकृतांग में महत्त्वपूर्ण दार्शनिक चर्चाएँ हुई हैं। साथ ही आध्यात्मिक सिद्धान्तों को जीवन में ढ़ालने एवं अन्य मतों का परित्याग कर शुद्ध श्रमणाचार का पालन करने की प्रेरणा भी दी गई है।

भगवान महावीर के समय किस—किस कोटि की परम्पराएँ उस समय विद्यमान थी? उनके धार्मिक उपादान क्या थे? इत्यादि बातों पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाश डाला गया है। कुछ ऐसी सूचनाएं हैं जो शोधार्थियों को विशेष दृष्टि प्रदान कर सकती हैं। भाषावैज्ञानिक दृष्टि से भी इस आगम का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अतः ऐतिहासिक, दार्शनिक एवं धार्मिक सभी दृष्टियों से यह आगम विलक्षण विशेषता रखता है।

—प्राध्यापक, जैन विद्या एवं तुलनात्मक धर्म-दर्शन विभाग
जैन विश्व भारती संस्थान
लाडनूँ (राज.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org